B.A. Sanskrit
Year – II
Semester – III
Paper - I

हिन्दी - ३
Hindi - 3

Centre for Distance and Online Education

श्रीचन्द्रशेखरेन्द्रसरस्वतीविश्वमहाविद्यालयः

Sri Chandrasekharendra Saraswathi Viswa Mahavidyalaya

Deemed to be University u/s 3 of UGC Act 1956 - Accredited with 'A' grade by NAAC

Enathur, Kanchipuram 631561.

Sponsored and run by Sri Kanchi Kamakoti Peetam Charitable Trust

Chief Editor
Prof. Dr. G. Srinivasu
Vice-Chancellor, SCSVMV

General Editor
Dr. B. Balaji Srinivasan
Director, CDOE

Programme Co-ordinator
Dr. Debajyoti Jena

Additional Co-ordinator
1. Dr. R. Naveen (Academic)
2. Dr. M. Senthil Kumaran (Technical)

Course Co-ordinator
Dr. R. Naveen

Course Writer
Dr. D. Nageswara Rao

Assistants
R.K.Pirakas
S. Vasudevan
S.V. Kalpavalli

© SCSVMV Deemed University, June 2024

All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph any other means, without permission in writing from the below mentioned centre
Further information on the SCSVMV ODL Programmes may be obtained from
Centre for Distance and Online Education (CDOE)
Sri Chandrasekharendra Saraswathi Viswa Mahavidyalaya,
Enathur,Kanchipuram-631561.
Tamil Nadu, India
Phone: 044 – 2726 4301; Mail Id: onlineprograms@kanchiuniv.ac.in ;

शुभाभिनन्दनानि

संसकृतवाङ्मयाध्ययननिरतानां समेषां विद्यार्थिनां श्रीचन्द्रशेखरेन्द्रसरस्वती विश्वमहाविद्यालयेन काञ्चीपुरस्थेन सञ्चाल्यमाने दूरविद्याकेन्द्रे भागं ग्रहीतुं सादरं स्वागतम्। विश्वविद्यालयोऽयं राष्ट्रियमूल्याङ्कनप्रत्यायनपरिषदा)NAAC ('A' श्रेण्यां प्रमाणीकृतः एवं विश्वविद्यालयानुदानायोगेन (UGC) सङ्घटनेन दूरविद्याकेन्द्रत्वेन अनुमतः वर्तते।

विश्वमहाविद्यालयोऽयं १९९३ वर्षे भारतसर्वकारद्वारा प्रकटितः तदारभ्य प्रतिवर्षं विद्याध्यापनक्षेत्रे तथा परिशोधनकार्ये च महतीं समुन्नतिं प्रदर्शयन् वर्धमानः अस्ति। भारतीयपरम्परायां प्राचीनानां ऋषीणां पण्डितानां तथा कवीनां च योगदानं मानवस्य सर्वाङ्गीनविकासाय तथा लोकपरिरक्षणाय च ज्ञानगङ्गां निरन्तरतया प्रवाहयति। नैकानि शास्त्राणि तत्र वर्तन्ते। वेदाः चत्वारः ,इतिहासौ ,अष्टादशपुराणानि ,षड्दर्शनानि ,षडङ्गाणि ,उपनिषदः ,उपवेदाः , चतुःषष्टिकलाः ,काव्यानि ,धर्मशास्त्रं इत्यादिना ज्ञानपरम्परा अनन्ता सति बहुभ्यः युगेभ्यः लोकस्य मार्गदर्शनं करोति।

प्रकृतेस्मिन् काले पाश्चात्यविज्ञानस्य प्रभावेन भारतीय ज्ञानदीपस्य प्रकाशः ह्रासतामेति। s आधुनिकविज्ञानद्वारा समाजस्य लाभः विद्यते एव। तथापि अस्मदीयं वाङ्मयं तु न विस्मरणीयं परित्याज्यं च। भारतीयानाम् अनुभवे आचरणे च विद्यामाना योगविद्या प्रपञ्चे सर्वैरपि आद्रियमाना दृश्यते। एवम् आयुर्वेदादयः अपि। अतः अधुनातनविज्ञानेन साकं प्राचीनविज्ञानस्य संयोजनद्वारा प्रपञ्चस्य महानुपयोगः भवति। अनयैव धिया श्रीकाञ्ची कामकोटिपीठाधिपैः प्राचीननवीन- विद्ययोः संमेलनाय विश्वमहाविद्यालयोयं संस्थापितः। तदिदं लक्ष्यम् s अग्रे सारयति अध्यापनेन परिशोधनेन च।

श्रीचन्द्रशेखरेन्द्रसरस्वती विश्वमहाविद्यालयः स्वीयेप्राङ्गने बहुविधाः विद्याः बोधयन् दूरस्थानां जिज्ञासूनामपि लाभाय केन्द्रमिदं प्रचालयति। एतत् द्वारा विद्यार्थिनः लाभं लभन्तामिति आशास्महे।

Vice chancellor

Sri Chandrasekharendra Saraswati Viswa Mahavidyalaya

Enathur, Kanchipuram

कुलपति की ओर से..

ऑनलाइन एवं दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से हिंदी को एक विषय के रूप में पढने के लिए जिन विद्यार्थियों ने पंजीकृत किया है, उन सभी का कांचीपुरम् स्थित श्री चन्द्रशेखरेन्द्रसरस्वती मानित विश्वविद्यालय की ओर से हार्दिक स्वागत है। विश्वविद्यालय राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद (NAAC) - के द्वारा A श्रेणी से प्रमाणित है तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) के दूरस्थ शिक्षा केन्द्र की अनुमति प्राप्त है। 1993 में मानित विश्वविद्यालय के रूप में भारत सरकार के द्वारा घोषित किये जाने के पश्चात् विश्वविद्यालय ने उच्च शिक्षा एवं शोधकार्य के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हासिल की है और आगेच के पथ पर अग्रसर है।

हिंदी भारतीय भाषा-समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है और इसका राष्ट्रीय एकता में महत्वपूर्ण योगदान है। भारत एक विविधताओं और भाषाओं का देश है, जिसमें अनेकता में एकता को साधने के लिए हिंदी का महत्वपूर्ण स्थान है। हिंदी भारतीय संविधान की राजभाषा है और इसे राष्ट्रीय भाषा के रूप में भी माना जाता है। यह कहना अत्युक्ति नहीं कि यदि बाकी भारतीय भाषाओं को रंग बिरंगे फूल कहा जाये तो हिंदी वह सूत्र है जो इन फूलों को एक बनाकर रखता है। हिंदी भारतीय संस्कृति की संवाहिका है। इस भाषा को एक तरफ संस्कृत की विरासत प्राप्त है और आधुनिक भारतीय भाषाओं से मैत्री भी। हिंदी एवं अधिकांश भारतीय भाषाओं की शब्दावली की साम्यता इसका प्रबल प्रमाण है।

संख्या की दृष्टि से देखा जाये तो हिंदी भारत की सबसे अधिक संख्या में बोलने और समझनेवाली भाषा है। उत्तर भारत के अधिकांश राज्यों की यह प्रथमभाषा है और दक्षिण, पश्चिमी, पूर्वी भारत में भी द्वितीय तथा तृतीय भाषा के रूप में लोग अपनाते हैं। यह अत्यंत सरल आम भाषा है जिसे करोडों लोग बोलते हैं। हिंदी राष्ट्रीय एकता व सांस्कृतिक सद्भावना की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

हिंदी न केवल भाषा होती है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति के महत्वपूर्ण हिस्से के रूप में भी अहम भूमिका निभाती है। इसके माध्यम से हम अपनी सांस्कृतिक विरासत को बढ़ावा देते हैं और भारतीय परंपराओं को समझने में सक्षम हो सकते हैं। इसके साथ ही, विभिन्न क्षेत्रों की लोकप्रिय कथाएँ, गाने और कविताएँ हिंदी में ही अधिक सरलता और गहराई से बयां की जाती हैं। हिंदी साहित्य अत्यंत समृद्ध एवं विशाल है। हिंदी में तुलसीदास, सूरदास, कबीर, जायसी,

रहीम एवं मीराँ का साहित्य है और इसे सांप्रदायिक सद्भावना एवं लोक समन्वय की अद्भुत बानगी की संज्ञा दी जा सकती है। राजनीतिक दृष्टिकोण से भी, हिंदी एक समान स्थान रखती है जो राष्ट्रीय स्तर पर संवाद का माध्यम बनती है। यह न केवल सरकारी कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, बल्कि लोगों को अपने अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में सही जानकारी प्राप्त करने में मदद करती है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी, हिंदी एक महत्वपूर्ण भाषा है जो विद्यार्थियों को स्वतंत्र रूप से अपनी भाषा में विचार व्यक्त करने में सहायक होती है। यह स्थानीय भाषाओं को समझने और उनकी सम्मान करने में भी मदद करती है, जिससे छात्रों में सांस्कृतिक एवं भाषिक समन्वय स्वाभाविक रूप से संपन्न हो जाता है। हिंदी के अध्ययन से रोजगार के क्षेत्र में भी अनेक मौके हासिल किये जा सकते हैं क्योंकि हिंदी सबसे अधिक जनता के द्वारा बोली और समझी जानेवाली भाषा है।

इस पाठ्यक्रम में हिंदी भाषा एवं साहित्य से संबंधित उपरोक्त सभी बिंदुओं का समावेश किया गया है और हम आशा करते हैं कि इस पाठ्यक्रम के अध्ययन से सभी विद्यार्थी लाभान्वित होंगे।

अस्तु...

हिन्दी – ३

Hindi - 3

पाठ्य परिचय :

यह पत्र बी.ए. संस्कृत के छात्रों के लिए द्वितीय भाषा हिंदी हेतु निर्मित है। तृतीय सत्र के इस पाठ्यक्रम के अंतर्गत हिंदी साहित्य की सभी विधाओं से संबंधित सभी प्रमुख कवियों का सामान्य परिचय दिया गया है और साथ ही साथ यह ध्यान में रखा गया है कि छात्रों की रुचि को हिंदी साहित्य के प्रति बढावा मिले। मध्यकालीन कविता, आधुनिक कविता, गद्य की विधाओं में कहानी, एकांकी, व्यंग्य इत्यादि सभी विधाओं को दृष्टि में रखते हुए छात्रों को हिंदी साहित्य की विधाओं के प्रति भी सही जानकारी दिलाने का प्रयास किया गया है। 'शुद्ध कीजिए' और पत्रलेखन जैसी विविध प्रक्रियाओं के द्वारा यह प्रयास किया गया है कि व्याकरण के विविध अंशों का सही-सही उपयोग हिंदी भाषा के व्यवहार के संदर्भ में कैसे करें। व्याकरण में अनुवाद तथा पारिभाषिक शब्दावली का भी सामान्य व्यवहार छात्रों के लिए अत्यंत उपयोगी साबित होगा। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि संस्कृत के विद्यार्थियों के लिए हिंदी का यह पत्र अत्यंत आकर्षक एवं उनके भावी जीवन में रोजगार की दृष्टि से अत्यंत उपयोगी है।

प्रथम खण्ड :

प्रथमखंड के अंतर्गग हिंदी के भक्तिकाल का विवरण दिया जायेगा। भक्तिकाल की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए हिंदी साहित्य के इतिहास पर हल्का प्रकाश डाला जायेगा और भक्तिकाल में दो धाराओं-यथा- सगुण और निर्गुण भक्तिधारा की चर्चा की जायेगी। सगुणभक्तिधारा में कृष्णभक्तिशाखा के अंतर्गत मीराँ के योगदान पर प्रकाश डालते हुए उनके द्वारा विरचित कतिपय पदों की चर्चा की जायेगी। सप्रसंग व्याख्या के साथ पदों का सांगोपांग

विवरण प्रस्तुत किया जायेगा। तत्पश्चात् रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि बिहारीलाल के कतिपय दोहों की चर्चा की जायेगी। संदर्भ-प्रतिपदार्थ सहित एवं सप्रसंग व्याख्या के साथ इनका सांगोपांग विवरण प्रस्तुत किया जायेगा।

द्वितीय खण्ड :

द्वितीय खंड के अंतर्गग हिंदी साहित्य में आधुनिक काल में रचित कविताओं का परिचय छात्रों को दिया जायेगा। हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में अत्यंत विख्यात कविता 'झांसी की रानी' का परिचय दिया जायेगा और कवइत्री सुभद्राकुमारी चौहान को इस खंड के दौरान छात्र पढेंगे। पाठ्यसामग्री की चर्चा के दौरान संदर्भ-प्रतिपदार्थ सहित एवं सप्रसंग व्याख्या के साथ इन कविताओं का सांगोपांग विवरण प्रस्तुत किया जायेगा।

तृतीय खण्ड :

तृतीय खंड के अंतर्गग हिंदी साहित्य में आधुनिक काल में रचित गद्य साहित्य का कुछ विस्तृत रूप से परिचय दिया जायेगा। हिंदी भाषा में खडीबोली साहित्य और आधुनिककाल के आरंभ की चर्चा करते हुए कहानी साहित्य पर प्रकाश डाला जायेगा एवं प्रेमचंद की कहानियों पर विशेषरूप से प्रकाश डालते हुए 'पूस की रात' कहानी को पढाया जायेगा। हिंदी

कहानी साहित्य को प्रेमचंद की देन पर भी इस संदर्भ में चर्चा की जायेगी। उसके पश्चात् गद्य की एक और मुख्य विधा एकांकी के विभाग में सेठ गोविन्ददासि विरचित 'शिवाजी का सच्चा स्वरूप' एकांकी पर प्रकाश डाला जायेगा। सप्रसंग व्याख्या के साथ इन दोनों पाठों का सांगोपांग विवरण एवं सारांश प्रस्तुत किया जायेगा।

चतुर्थ खण्ड :

चतुर्थ खंड के अंतर्गग हिंदी साहित्य में आधुनिक काल में रचित गद्य साहित्य का परिचय दिया जायेगा। हिंदी भाषा में कहानी साहित्य के उद्भव और विकास का परिचय देते हुए पंडित श्रीरामशर्मा द्वारा रचित 'नायक का चुनाव' पाठ को पढाया जायेगा। इस संदर्भ में शिकार साहित्य को पं. श्रीरामशर्मा की देन पर भी चर्चा की जायेगी। संदर्भ सहित व्याख्या एवं कठिनशब्दों के अर्थों के साथ पाठ का सारांश प्रस्तुत किया जायेगा।

पंचम खण्ड :

वैश्वीकरण के युग में अनुवाद एक अपरिहार्य प्रक्रिया है। इस परिप्रेक्ष्य में हिंदी की प्रयोजनमूलकता के स्वरूप पर ध्यान देना आवश्यक होगा। आज के युग में हिंदी ऐसी भाषा बनने जा रही जो कि यह विश्व में किसी भी अंतर्राष्ट्रीय भाषा से कम महत्वपूर्ण नहीं होगी। ऐसे में इस भाषा को समृद्ध बनाने और हिंदी साहित्य को और प्रभावशाली रूप से विश्वस्तरीय

बनाने हेतु हिंदी छात्रों को तैयार रहना होगा। इस दृष्टि से हिंदी की प्रयोजनमूलकता को बढावा देते हुए इस भाषा के साथ अनुवाद का पहलू भी जोड दिया जायेगा। यह पहलू हिंदी के छात्रों को अत्यधिक रोजगारोन्मुख बनायेगा और इससे हिंदी के छात्र अत्यंत लाभान्वित होंगे। पाठ्यांशों के अंतर्गत अनुवाद को सैद्धांतिक स्तर पर छात्रों को सरल एवं बोधगम्य बनाने हेतु अनुवाद की परिभाषा, अनुवाद के स्वरूप एवं प्रकार तथा अनुवाद के महत्व पर प्रकाश डाला जायेगा।

खण्ड	विषय	पुटसंख्या
१	13. मीरा बाई की पदावली 14. बिहारीलाल के दोहे	11-16
२	15. झाँसी की रानी 16. अकाल और उसके बाद	17-19
३	17. पूस की रात 18. शिवाजी का सच्चा स्वरूप	20-35
४	19. अरण्य संस्कृति (प्रबोधात्मक निबंध)	36-42
५	20. प्रयोजनमूलक हिन्दी	43-46

खण्ड - १

13. मीरा बाई की पदावली

मीरा बाँई भारत के मध्ययुग में जन्मी महान कृष्णभक्तिन थीं। आपको हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में सगुण भक्तिधारा के अंतर्गत कृष्णभक्ति शाखा की प्रमुख कवइत्री माना जाता है। आपका जन्म संवत 1555 में जोधपुर के कुड़की नामक गाँव में हुआ था। आप जोधपुर के राजा रत्नसिंह की बेटी थीं। आपका विवाह मेवाड़ के राजा भोजराज से हुआ था। विवाह 'कुछ ही दिनों बाद आपके पति का देहान्त हो गया था। के

मीरा बचपन से ही कृष्ण की भक्तिन थीं। उन्होंने श्रीकृष्ण की भक्ति में तल्लीन होकर कुल की मर्यादा का ध्यान नहीं रखा। ससुराल वालों को मीरा का व्यवहार पसंद नहीं आया तो उन्होंने उसे मार डालने का प्रयत्न भी किया। लेकिन मीरा अपने मार्ग से विचलित नहीं हुईं। कुछ समय बाद आप राजमहल छोड़कर बृंदावन चली गयी और वहीं पर उनका देहान्त 1603 में हो गया। मीरा बाँई ने श्रीकृष्ण की भक्ति की दीवानी बनकर जो गीत गाये वे सब हिन्दुस्तानी संगीत के कण्ठ हार हैं। आपके पदों का संग्रह 'मीरा बाँई पदावली' नाम से प्रसिद्ध है। इनके अलावा आपने 'नरसी का मायरा', 'गीत गोविन्द टीका', 'राग गोविन्द', 'सोरठा के पद', 'मीरा बाई का मल्हार', 'फुटकर पद' और 'गर्वागीत' आदि रचनाएँ भी कीं ।

पद

पायो जी मैंने रामरतन धन पायो ।

वस्तु अमोलक दी म्हाँरे सतगुरु, किरपा करि अपनायो ।

जनम जनम की पूँजी पाई, जग में सभी खोवायो ।

खरचै नहिं कोई चोर न लेवे, दिन-दिन बढ़त सवायो ।

सत की नाव खेवहिया सतगुरु, भवसागर तर आयो ।

मीरा के प्रभु गिरिधर नागर, हरख- हरख जस गायो ।

मेरे तो गिरिधर गोपाल, दूसरो न कोई ।

जाके सिर मोर मुकुट, मेरो पति सोई ।

कुल की कानि, कहा करिहैं कोई ।

संतन ढ़िग बैठि-बैठि, लोक लाज खोई ।

अँसुवन जल सींचि-सींचि, प्रेम बेलि बोई

| अब तो बेल फैलि गई आनन्द फल होई ।

भगत देखि राजी हुई, जगत देखि रोई ।

दासि मीरा लाल गिरिधर, तारो अब मोहीं । ।

हरि तुम हरो जन की पीर ।

द्रौपदी की लाज राखी, तुम बढ़ायो चीर ।।

भक्त कारन रूप नरहरि, धरयो आप सरीर ।

बूड़ते गजराज राख्यो, कियो बाहर नीर।

दासि मीरा लाल गिरिधर, दुःख जहाँ तहाँ सीर।।

14. बिहारीलाल के दोहे

बिहारीलाल हिन्दी साहित्य के रीतिकाल के प्रतिनिधि कवि हैं। आपका एकमात्र काव्य 'बिहारी सतसई' है। यह सात सौ दोहों का संकलन है जिसके कारण बिहारी की ख्याति हिन्दी साहित्य में अखण्ड रूप में फैली हुई है। आप राजा जयसिंह के दरबार में रहते थे।

'बिहारी सतसई' में ब्रजभाषा का परिमार्जित रूप लक्षित होता है। संस्कृत की 'गाथा सप्तशती' एवं 'आर्या सप्तशती' कृतियों से प्रेरणा पाकर इसका सर्जन किया गया था। इसमें भक्ति, शृंगार, विज्ञान, गणित, प्रकृति-चित्रण, ज्योतिष, धर्म एवं नीतिपरक दोहे मिलते हैं। कम से कम शब्दों में बड़ी से बड़ी बात कहने की क्षमता आपके पास थी। इसलिए कहा गया-

"सतसैइया के दोहरे ज्यों नावक के तीर,

देखन में छोटै लगे, घाव करें गंभीर ।। "

दोहे

मेरी भवबाधा हरौ, राधा नागरि सोइ ।

जा तन की झाईं परैं, श्यामु हरित दुति होइ।।

सीस मुकुट कटिकाछनी, कर मुरली उर माल ।

इहि बानक मो मन बसौ, सदा बिहारी लाल।।

कोऊ कोटिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार ।

मो संपति जदुपति सदा, बिपति बिदारण हार । ।

कनक-कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाइ ।

इहिं खाये ही बौराय जग, वह पाये ही बौराइ । ।

बतरस लालच लाल की, मुरली धरी लुकाइ ।

सौंह करे, भौंहनि हँसे, देन है, नटि जाइ ।।

दीरघ साँस न लेहि दुख, सुख साई न भूलि ।

दई-दई क्यों करतु है, दई-दई सु कबूलि ।।

अधर धरत हरि कैं परत, ओठ-दीठि-पट ज्योति ।

हरित बाँस की बाँसुरी, इंद्रधनुष रंग होति ।। |

तन्त्रनाद, कवित्त रस, सरसु राग रति रंग ।

अनबूड़े बड़े, तरे जे बूड़े सब अंग ।।

सोहत ओढें पीतु पटु, स्यामु सलौने गात ।

मनो नीलमनि सैल पर, आतपु परयौ प्रभात ।।

की अरु नल नीर की गति एकै करि जोइ ।

जेतो नीचे ह्वै चलै ते तो ऊँचौ होइ ।।

खण्ड – २

15. झाँसी की रानी

श्रीमति सुभद्राकुमारी चौहान

श्रीमति सुभद्राकुमारी चौहान का जन्म सन् 1904 ई. में प्रयोग में हुआ था। आप हिन्दी की एक प्रसिद्ध कवइत्री एवं कहानीकार हैं। आपका विवाह ठाकुर लक्ष्मण सिंह के साथ हुआ था और पति-पत्नी दोनों ने स्वतंत्रता संग्राम में सक्रियरूप से भाग लिया। कई बार आपको जेल भी जाना पड़ा। सन् 1948ई. में एक मोटर दुर्घटना में श्रीमति सुभद्रा जी का स्वर्गवास हो गया।

झाँसी की रानी' सुभद्रा जी की अत्यंत प्रसिद्ध कविता है। यह हिन्दी की अमरकाव्य-कृति है। इसमें आपने झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की वीरता का सजीव वर्णन किया। 'मुकुल' और 'त्रिधारा' नामक काव्यों में आपकी अन्य कविताएँ संकलित हैं। सरलता, सहज प्रवाहमयता आपके काव्य की विशेषताएँ हैं।

सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटि तानी थी,

बूढ़े भारत में भी आयी, फिर से नयी जवानी थी।

गुमी हुई आज़ादी की कीमत सबने पहचानी थी,

दूर फिरंगी को करने की, सबने मन में ठानी थी ।

चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी,

बुन्देले हरबोलों के मुख, हमने सुनी कहानी थी,

खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।

कानपुर के नाना की, मुंहबोली बहन 'छबीली' थी,

लक्ष्मीबाई नाम पिता की, वह संतान अकेली थी,

नाना के संग पढ़ती थी वह, नाना के संग खेली थी,

बरछी ढ़ाल कृपाण कटारी, उसकी यही सहेली थी ।

वीर शिवाजी की गाथाएँ, उसको याद जुबानी थी,

बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी,

खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

16. अकाल और उसके बाद

नागार्जुन

नागार्जुन हिन्दी के प्रतिभाशाली साहित्यकारों में से एक थे। आपका जन्म सन् 1911ई. में बिहार के दरभंगा स्थित सतलखा गाँव में हुआ था। आपका असली नाम वैद्यनाथ मिश्र था। आप हिन्दी, संस्कृत, पाली, मागधी, मैथिली तथा तिब्बती भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे। बाद में

आपने बौद्ध धर्म को अपनाया। किसान आंदोलन से जुड़े नागार्जुन मार्क्सवाद के कड़े समर्थक थे।

आप 'नागार्जुन' तथा 'यात्री' नामों से साहित्य लिखा करते थे। आपको हिन्दी में प्रगतिवाद के साथ जोड़कर देखा जाता है। प्रस्तुत कविता में अकाल की परिस्थितियों में एक घर का सजीव चित्रण किया।

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त ।

दाने आये घर के अंदर कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आँगन के ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठीं घर भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलायी पाँखें कई दिनों के बाद ।

खण्ड – ३

17. पूस की रात

(कहानी)

प्रेमचन्द

'पूस की रात' के लेखक प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य के महान कथाकार के रूप में विख्यात हैं । आपकी रचनाएँ आदर्शवाद एवं परिवर्तनवाद से आरंभ होकर यथार्थवाद में परिवर्तित हुईं। यह अकसर कहा जाता है कि यदि बीसवी सदी के पूर्वार्ध में उत्तर भारत को सही ढ़ंग से पहचानना है तो प्रेमचन्द की रचनाएँ पढ़ना अनिवार्य है। आपको हिन्दी साहित्य में 'उपन्यास सम्राट' कहा जाता है। आपकी कहानियाँ जो 300 से अधिक हैं- 'मानसरोवर' नाम से संकलित हैं। ,

प्रेमचन्द का जन्म सन् 1880ई. में उत्तर प्रदेश के लमही नामक गाँव में हुआ था। बचपन से ही आपने कहानियाँ लिखना शुरू की। पहले आप उर्दू में लिखते थे फिर हिन्दी में लेखन का कार्य आरंभ किया। जीवन के लंबे संघर्ष के बाद सरकारी नौकरी प्राप्त हुई किन्तु कुछ सालों के बाद स्वाधीनता संग्राम के समय में आपने अपनी नौकरी त्याग दी। फिर आजीवन संपादन एवं लेखन कार्य से जुडे रहे। आपने 'हंस' और 'जागरण' नामक पत्रिकाओं की स्थापना की। प्रेमचन्द ने भारत की सर्वांगीण मुक्ति के लिए अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रयत्न किया। 1936 ई. में आपने 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना की। उसी वर्ष उनका निधन हो गया।

'पूस की रात' भारतीय किसान की आर्थिक दुस्थिति का चित्रण करनेवाली कहानी है। आपने इस कहानी के माध्यम से एक औसत किसान का करुणचित्र खींचा। पात्रों का सजीव चित्रण एवं वातावरण का अंकन कहानी की विशेषताएँ हैं।

हल्कू ने आकर स्त्री से कहा “सहना आया है। लाओ, जो रूपये रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे। "

मुन्नी झाड़ू लगा रही थी। पीछे फिरकर बोली - "तीन रूपये हैं, दे दोगे तो कम्बल कहाँ से आवेगा ? माघ- पूस की रात हार में कैसे कटेगी? उससे कह दो, फसल पर दे देंगे, अभी नहीं । "

हल्कू एक क्षण अनिश्चित दशा में खड़ा रहा। पूस सिर पर आ गया, कम्बल के बिना हार में रात को वह किसी तरह सो नहीं सकता। मगर सहना मानेगा नहीं, घुड़कियाँ जमावेगा, गालियाँ देगा । बला से जाड़ों में मरेंगे, बला तो सिर से टल जाएगी। यह सोचता हुआ वह अपना भारी भरकम डील लिये हुए जो उसके नाम को झूठ सिद्ध करता था, स्त्री के समीप आ गया और खुशामद करके बोला - " ला दे दे, गला तो छूटे। कम्मल के लिए कोई दूसरा उपाय सोचूँगा।” ,

मुन्नी उसके पास से दूर हट गयी और आँखें तरेरती हुई बोली - " कर चुके दूसरा उपाय | जरा सुनूं तो कौन उपाय करोगे। कोई खैरात दे देगा कम्मल ? न जाने कितनी बाकी है, जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। मैं कहती हूँ, तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते ? मर-मर काम

करो, उपज हो तो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई। बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जनम हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज आये। मैं रूपये न दूँगी - न दूँगी। "

हल्कू उदास होकर बोला, "तो क्या गाली खाऊँ?

"मुन्नी ने तड़पकर कहा, " गाली क्यों देगा ? क्या उसका राजहै?'

मगर यह कहने के साथ ही उसकी तनी हुई भौहें ढ़ीली पड़ गयीं। हल्कू के उस वाक्य में जो कठोर सत्य था, जो कठोर सत्य था, वह मानो एक भीषण जन्तु की भाँति उसे घूर रहा था। उसने जाकर आले पर से रूपये निकाले और लाकर हल्कू के हाथ पर रख दिये। फिर बोली"तुम छोड़ दो अबकी से खेती। मजूरी में सुख से एक रोटी खाने को तो मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती है। मजूरी करके लाओ, वह भी उसी में झोंक दो, उस पर धौंस। "

हल्कू ने रूपये लिये और इस तरह चला, मानो अपना हृदय निकालकर देने जा रहा है। उसने मजूरी से एक-एक पैसा काटकाटकर तीन रूपये कम्बल के लिए जमा किये थे। वह आज निकले जा रहे थे। एक-एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था।

पूस की अंधेरी रात। आकाश पर तारे भी ठिठुरते हुए मालूम होते थे। हल्कू अपने खेत के किनारे ऊख के पत्तों की एक छतरी के नीचे बाँस के खटोले पर अपनी पुरानी गाढ़े की चादर ओढ़े पड़ा काँप रहा था। खाट के नीचे उसका संगी कुत्ता जबरा पेट में मुँह डाले सर्दी से कूँ-कूँ कर रहा था। दो में से एक को भी नींद न आती थी।

हल्कू ने घुटनियों को गरदन में चिपकाते हुए कहा- "क्यों जबरा, जाड़ा लगता है? कहता तो था, घर में पुआल पर लेट रह, तो यहाँ क्या लेने आये थे ? अब खाओ ठण्ड, मैं क्या

करूँ ? जानते थे, मैं यहाँ हलुवा -पुरी खाने आ रहा हूँ, दौड़े-दौड़े आगे-आगे चले आये। अब रोओ नानी के नाम को।

जबरा ने पड़े-पड़े दुम हिलायी और अपनी कूँ- कूँ को दीर्घ बनाता हुआ एक बार जम्हाई लेकर चुप हो गया। उसकी श्वान बुद्धि ने शायद ताड़ लिया, स्वामी को मेरी कूँ- कूँ से नींद नहीं आ रही है। हल्कू ने हाथ निकालकर जबरा की ठण्डी पीठ सहलाते हुए कहा-

कल से मत आना मेरे साथ, नहीं तो ठण्डे हो जाओगे। यह रॉड़ पछुआ न जाने कहाँ से बरफ लिये आ रही है। उहूँ, फिर एक चिलम भरूँ। किसी तरह रात तो कटे। आठ चिलम तो पी चुका। यह खेती का मजा है। और एक भगवान ऐसे पड़े हैं, जिनके पास जाड़ा जाए तो गरमी से घबड़ाकर भागे। मोटे-मोटे गद्दे, लिहाफ, कम्बल। मजाल है, जाड़े का गुजर हो जाए। तकदीर की खूबी है। मजूरी हम करें, मजा दूसरे लूटें। हल्कू उठा गड्ढे में से जरा सी आग निकालकर चिलम भरी। जबरा भी उठ बैठा। हल्कू ने चिलम पीते हुए कहा"पिएगा चिलम, जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ जरा मन बहल जाता है।" जबरा ने उसके मुँह की ओर प्रेम से छलकती हुई आँखों से
देखा।

हल्कू- "आज और जाड़ा खा ले। कल से मैं यहाँ पुआल बिछा दूँगा। उसी में घुसकर बैठना, तब जाड़ा न लगेगा।

जबरा ने अपने पंजे उसकी घुटनियों पर रख दिए और उसके मुँह से के पास अपना मुँह ले गया। हल्कू को उसकी गर्म साँस लगी। चिलम पीकर हल्कू फिर लेटा और निश्चय करके लेटा कि चाहे कुछ हो अबकी सो जाऊँगा पर एक ही क्षण में उसके हृदय में कंपन होने लगा।

कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट, पर जाड़ा किसी पिशाच की भाँति उसकी छाती को दबाए हुए था।

जब किसी तरह न रहा गया, उसने जबरा को धीरे से उठाया और उसके सिर को थपथपाकर उसे अपनी गोद में सुला लिया। कुत्ते की देह से जाने कैसी दुर्गंध आ रही थी, पर वह उसे अपनी गोद में चिमटाए हुए ऐसे सुख का अनुभव कर रहा था, जो इधर महीनों से उसे न मिला था। जबरा शज़यद समझ रहा था कि स्वर्ग यही है, और हल्कू की पवित्र आत्मा में तो उस कुत्ते के प्रति घृणा की गंध तक न थी। अपने किसी अभिन्न मित्र या भाई को भी वह इतनी तत्परता सेगले न लगाता। वह अपनी दीनता से आहत न था, जिसने आज उसे इस दशा को पहुँचा दिया। नहीं, इस अनोखी मैत्री ने जैसे उसकी आत्मा के सब द्वार खोल दिए थे और उसका एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था।

सहसा जबरा ने किसी जानवर की आहट पायी। इस विशेष आत्मीयता ने उसमें एक नयी स्फूर्ति पैदा कर दी थी, जो हवा के ठण्डे झोंकों को तुच्छ समझती थी। वह झपटकर उठा और छपरी के बाहर आकर भूंकने लगा। हल्कू ने उसे कई बार पुचकारकर बुलाया, पर यह उसके पास न आया। हार में चारों तरफ दौड़-दौड़कर भुंकता रहा। एक क्षण के लिए भी आ जाता, तो तुरंत ही फिर दौड़ता। कर्तव्य उसके हृदय के अरमान की भाँति उछल रहा था।

एक घण्टा और गुजर गया। रात ने शीत को हवा से धधकाना शुरू किया। हल्कू उठ बैठा और दोनों घुटनों को छाती से मिलाकर सिर को उसमें छिपा लिया, फिर भी ठण्ड कम न हुई। ऐसा जान पड़ता था, सारा रक्त जम गया है, धमनियों में रक्त की जगह हिम बह रही है।

उसने झुककर आकाश की ओर देखा, अभी कितनी रात बाकी है। सप्तर्षि अभी आकाश में आधे भी नहीं चढ़े। ऊपर आ जाएँगे तब कहीं सवेरा होगा। अभी पहर से ऊपर रात है।

हल्कू के खेत से कोई एक गोली के टप्पे पर आमों का एक बाग था। पतझड़ शुरू हो गयी थी । बाग में पत्तियों का ढेर लगा हुआ था। हल्कू ने सोचा, चलकर पत्तियाँ बटोरूँ और उन्हें जलाकर खूब तापूँ। रात को कोई मुझे पत्तियाँ बटोरते देखे तो समझे, कोई भूत है । कौन जाने, कोई जानवर ही छिपा बैठा हो, मगर अब तो बैठे नहीं रहा जाता।

उसने पास के अरहर के खेत में जाकर कई पौधे उखाड़ लिए और उनका एक झाड़ू बनाकर हाथ मेंसुलगता हुआ उपला लिये बगीचे की तरफ चला । जबरा ने उसे आते देखा, पास आया और दुम हिलाने लगा। हल्कू ने कहा, “अब तो नहीं रहा जाता जबरू। चलो, बगीचे में पत्तियाँ बटोरकर तापें । टाँटे हो जायेंगे, तो फिर आकर सोएँगे। अभी तो बहुत रात है ।" जबरा ने कूँ-कूँ करके सहमति प्रकट की और बगीचे की ओर चला ।

बगीचे में खूब अंधेरा छाया हुआ था और अंधकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था । वृक्षों से ओस की बूँदें टपटप नीचे टपक रही थी । एकाएक एक झोंका मेहंदी के फूलों खुशबू लिये हुए आया । हल्कू ने कहा- "कैसी अच्छी महक जबरू ! तुम्हारी नाक में भी कुछ सुगंध आ रही है ? " जबरा को कहीं जमीन पर एक हड्डी पड़ी मिल गयी थी । उसे निचोड़ रहा था ।

हल्कू ने आग जमीन पर रख दी और पत्तियाँ बटोरने लगा। जरा देर में पत्तियों का ढ़ेर लग गया। हाथ ठिठुरे जाते थे। नंगे पाँव गले जाते थे। और वह पत्तियों का पहाड़ खड़ा कर रहा था । इसी अलाव में वह ठण्ड को जलाकर भस्म कर देगा। थोड़ी देर में अलाव जल उठा। उसकी लौ ऊपरवाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छूकर भागने लगी। उस अस्थिर प्रकाश में बगीचे के

विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थे, मानो उस अथाह अंधकार को अपने सिरों पर संभाले हुए हो । अन्धकार के उस आनंद सागर से यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता, मचलता हुआ जान पड़ता था।

हल्कू अलाव के सामने बैठा आग ताप रहा था । एक क्षण में उसने दोहर उतारकर बगल में दबा ली, दोनों पाँव फैला दिए, मानो ठण्ड को ललकार रहा हो, "तेरे जी में आए सो कर ।" ठण्ड की

असीम शक्ति पर विजय पाकर वह विजय-गर्व को हृदय में छिपा न

सकता था।

उसने जबरा से कहा, "क्यों जब्बर, अब ठण्ड नहीं लग रहीहै

जब्बर ने कूँ-कूँ करके मानो कहा- " अब क्या ठण्ड लगती ही रहेगी?"

"पहले से यह उपाय न सूझा, नहीं - इतनी ठण्ड क्यों खाते ?" जबरा ने पूँछ हिलायी ।

" अच्छा, आओ, इस अलाव को कूदकर पार करें। देखें, कौन निकल जाता है। अगर जल गए बच्चा, तो मैं दवा न करूँगा ।' जब्बर ने उस अग्नि राशि की ओर कातर नेत्रों से देखा।

" मुन्नी से कल न कह देना, नहीं - लड़ाई करेगी। "

यह कहता हुआ वह उछला और उस अलाव के ऊपर से साफ निकल गया। पैरों में जरा लपट लगी, पर वह कोई बात न थी । जबरा आगे के गिर्द घूमकर उसके पास आ खड़ा हुआ।

हल्कू ने कहा- "चलो-चलो, इसकी सही नहीं। ऊपर से कूदकर आओ!" वह फिर कूदा और अलाव के इस पार आ गया।

पत्तियाँ जल चुकी थीं। बगीचे में फिर अँधेरा छाया था। राख के नीचे कुछ-कुछ आग बाकी थी, जो हवा का झोंका आ जाने पर जरा जाग उठती थी, पर एक क्षण में फिर आँखें बंद कर लेती थी। हल्कू ने फिर चादर ओढ़ ली और गर्म राख के पास बैठा हुआ एक गीत गुनगुनाने लगा। उसके बदन में गर्मी आ गयी थी, पर ज्यों-ज्यों शीत बढ़ती जाती थी, उसे आलस्य दबाए लेता था।

जबरा जोर से भूँझाकर खेत की ओर भागा। हल्कू को ऐसा मालूम हुआ कि जानवरों का एक झुण्ड उसके खेत में आया है। शायद नीलगायों का झुण्ड था। उनके कूदने दौड़ने की आवाजें साफ कान में आ रही थीं। फिर ऐसा मालूम हुआ कि खेत में चर रही हैं। उनके चबाने की आवाज चर चर सुनाई देने लगी। उसने दिल में कहा- 'नहीं, जबरा के होते कोई जानवर खेत में नहीं आ सकता। नोच ही डाले। मुझे भ्रम हो

रहा है। कहाँ ? अब तो कुछ नहीं सुनाई देता। मुझे भी कैसा धोखाहुआ।'

उसने जोर से आवाज लगायी - " जबरा, जबरा। "

जबरा भूंकता रहा। उसके पास न आया।

फिर खेत के चरे जाने की आहट मिली। अब वह अपने को धोखा न दे सका। उसे अपनी जगह से हिलना जहर लग रहा था। कैसा दँदाया हुआ बैठा था। इस जाड़े-पावे में खेत में जाना, जानवरों के पीछे दौड़ना असह्य जान पड़ा। वह अपनी जगह से न हिला।

उसने जोर से आवाज लगायी - 'हिलो ! हिलो ! हिलो !' जबरा फिर भूँक उठा। जानवर खेत चर रहे थे। फसल तैयार है कैसी अच्छी खेती थी, पर ये दुष्ट जानवर उसका सर्वनाश किए डालते हैं। हल्कू पक्का इरादा करके उठा और दो-तीन कदम चला, पर एकाएक हवा का ऐसा ठण्डा, चुभनेवाला बिच्छू के डंक का- सा झोंका लगा कि वह फिर बुझते हुए अलाव के पास

आ बैठा और राख को कुरेदकर अपनी ठण्डी देह को गर्माने लगा। जब्बरा अपना गला फाड़े डालता था, नीलगायें खेत का सफ़ाया किए डालती थीं और हल्कू गर्म राख के पास शांत बैठा हुआ था। अकर्मण्यता ने रस्सियों की भांति उसे चारों तरफ से जकड़ रखा था।

उसी राख के पास गर्म जमीन पर वह चादर ओढ़कर सोगया।

सबेरे जब उसकी नींद खुली, तब चारों तरफ धूप फैल गयी थी और मुन्नी कह रही थी- "क्या आज सोते ही रहोगे ? तुम यहाँ आकर रम गए और उधर सारा खेत चौपट हो गया। "

हल्कू ने उठकर कहा- "क्या तू खेत से होकर आ रही है ?

मुन्नी बोली- "हाँ, सारे खेत का सत्यानाश हो गया। भला, ऐसा भी कोई सोता है ! तुम्हारे यहाँ मँडैया डालने से क्या हुआ ? "

हल्कू ने बहाना किया- "मैं मरते-मरते बचा, तुझे अपने खेत की पड़ी है। पेट में ऐसा दरद हुआ, ऐसा दरद हुआ कि मैं ही जानता हूँ। "

दोनों फिर खेत के हाँड़ पर आये। देखा, सारा खेत रौंदा पड़ा हुआ है और जबरा मँडैया के नीचे चित लेटा है, मानो प्राण ही न हो। दोनों खेत की दशा देख रहे थे। मुन्नी के मुख पर उदासी छायी थी, पर हल्कू प्रसन्न था।

मुन्नी ने चिंतित होकर कहा - " अब मजूरी करके मालगुजारी भरनी पड़ेगी। "

हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा- "रात को ठण्ड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा !"

18. शिवाजी का सच्चा स्वरूप

(एकांकी)

- सेठ गोविन्ददास

हिन्दी में एकांकी एवं नाटक विधा को सुसंपन्न करनेवाले लेखकों में सेठ गोविन्ददास जी का नाम आदर के साथ लिया जाता है। आप हिन्दी साहित्य के लब्धप्रतिष्ठ नाटककार एवं एकांकीकार हैं। आपका जन्म मध्यप्रदेश के जबलपुर में सन् 1896 ई. में हुआ था। बचपन में ही सेठजी के व्यक्तित्व में देशभक्ति की भावना का उदय हुआ । इसीका व्यापक प्रभाव आपकी रचनाओं में देखा जा सकता है।

सेठ जी की रचनाओं में 'स्नेह का स्वर्ग', 'कर्तव्य', 'कर्ण', 'कुलीनता' आदि नाटक प्रसिद्ध हैं। विविध विषयों के एकांकी संग्रह भी उनके प्रकाशित हुए। उनमें 'सप्त रश्मि', 'धोखेबाज', 'दस अन्य एकांकी', 'पंचभूत', 'अष्टदल' आदि विशिष्ट हैं। प्रस्तुत पाठ एक एकांकी है जिसमें इतिहासप्रसिद्ध मराठा शासक एवं महायोद्धा छत्रपति शिवाजी के शील गुण और परधर्म सहिष्णुता पर प्रकाश डाला गया।

पात्र :

शिवाजी - प्रसिद्ध मराठा शासक

मोरोपन्त पिंगले - मराठा राज्य के पेशवा

आबाजी सोनदेव- शिवाजी का एक सेनापति

स्थान :

राजगढ़ दुर्ग का दालान

समय : सन् 1648ई. की एक संध्या

दाहिनी ओर दालान का कुछ हिस्सा दिखाई देता है। दालान की छत पत्थर के खम्बों पर टिकी है। उसके पीछे की दीवाल भी पत्थर की ही है। दालान के पीछे की ओर दाहिनी तरफ दूर पगढ़ की फसील और कुछ बुर्जियाँ दीख पड़ती हैं। बायीं तरफ सैह्याद्रि पर्वत माला की शिखरावली दृष्टि गोचर होती है। कुछ शिखरों की ओट में सूर्य अस्त हो रहा है, जिसके प्रकाश से सारा दृश्य आलोकित है। दालान के सामने किले का खुला मैदान है। मैदान में एक ऊँचे स्तंभ पर भगवा रंग का मराठा झण्डा फहरा रहा है। दालान में जाजम बिछी है, उस पर किमखाब की गद्दी मसनद के सहारे शिवाजी वीरासन से किसी विचार में मग्न हैं।

स्वरूप औरवेष-भूषा के संबंध में भी लिखना इसलिए निरर्थक है कि एक भी भारतीय ऐसा नहीं जो उनसे परिचित नहीं। दालान के बाहर शस्त्रों से सुसज्जित दो मावली रक्षक खड़े हैं। बायीं ओर से मोरोपंत पिंगले का प्रवेश | मोरोपंत अधेड़ अवस्था का गेहुएँ वर्ण का, ऊँचा पूरा व्यक्ति है। वेष-भूषा शिवाजी से मिलती-जुलती है, केवल सिर पर पगड़ी में अंतर है। मोरोपंत की पगड़ी शिवाजी की पगड़ी के सदृश मुगल ढंग की न होकर मराठी तर्ज की है। उसके मस्तक पर त्रिपुण्ड भी है।

मोरोपंत : (अभिवादन कर) श्रीमन्त सरकार ! सेनापति आबाजी सोनदेव कल्याण प्रान्त को जीत, वहाँ का सारा खजाना लेकर आ गये हैं।

शिवाजी : (चौंककर) अच्छा! (मोरोपंत की ओर देखकर) बैठो पेशवा, बड़ा शुभ संवाद लाये। आबाजी सोनदेव है कहाँ ?

मोरोपंत : श्रीमन्त सेवा में अभी उपस्थित हो रहे हैं।

कुछ देर निस्तब्धता। शिवाजी और मोरोपंत दोनों उत्सुकता से बायीं ओर देखते हैं। कुछ ही देर में आबाजी सोनदेव बायीं ओर से आता हुआ दिखाई देता है । उसके पीछे हम्मालों का एक बड़ा झुण्ड है। हर हम्माल के सिर पर एक हरा बड़ा भारी टोकरा है ।हम्मालों के झुण्ड के पीछे एक पालकी है। पालकी बंद है। आबाजी सोनदेव भी अधेड़ अवस्था का ऊँचा- पूरा मनुष्य है। वेष-भूषा मोरोपंत के सदृश है। आबाजी सोनदेव दालान में आकर शिवाजी का अभिवादन करता है। हम्मालों का झुण्ड और पालकी दालान के बाहर रहते हैं।

शिवाजी : बैठो, आबाजी, कल्याण - विजय पर तुम्हें बधाई है। बधाई है,

आबाजीः । बधाई है, श्रीमन्त सरकार को

शिवाजी : कहो, पैदल मावलियों ने अधिक वीरता दिखायी या हेटकारियों ने ?

आबाजी : दोनों ने ही श्रीमन्त सरकार ।

शिवाजी : और घुड़सवारों में बारगिरों ने या रिसालदारों ने

आबाजी : ? इनमें भी दोनों ने ही, श्रीमन्त

शिवाजी : सेना के अधिपति कैसे रहे

आबाजी पैदल के अधिपति नायक, हवालदार, जुमलादार और एक हजार घुड़सवारों अधिपति हवालदार, जुमलादार और सुबेदार, सभी का काम प्रशंसनीय रहा, श्रीमन्त सरकार ।

शिवाजी (हम्माल की ओर देखकर मुस्कुराते हुए) कल्याण का खजाना भी ले आए, बहुत माल मिला हाँ श्रीमन्त..सारा खजाना ले लिया गया और इतना माल मिला,

आबाजीः

जितना अब तक की किसी हमले में भी न मिला था। चाँदी, सोना, जवाहरात, न जाने क्याक्या मिला। मैं तो समझता हूँ, श्रीमन्त.. केवल दक्षिण ही नहीं, उत्तर की भी विजय इस संपदा से होसकेगी।

शिवाजी (हम्मालों के पीछे पालकी को देखकर) और इस मैणा में क्या है?

: आबाजि (मुस्कुराते हुए) उस मैणा.. मैणा में श्रीमन्त.. इस विजय का सबसे बड़ा तोहफा है !

शिवाजी : (उत्सुकुता से आबाजी सोनदेव की ओर देखते हुए) अर्थात्

आबाजी श्रीमन्त.. कल्याण के सुबेदार अहमद की पुत्रवधू के सौंदर्य का वृत्त कौन नहीं जानता उसे भी श्रीमन्त की सेवा के लिए बंदी करके लाया हूँ।

(शिवाजी की सारी प्रसन्नता एकाएक लुप्त हो जाती है। उनकी भृकुटी चढ़ जाती है और नीचे का ओंठ ऊपर के दाँतों के नीचे आ जाता है। आबाजी सोनदेव शिवाजी की परिवर्तित मुद्रा देखकर घबड़ा-सा जाता है । मोरोपंत एकटक शिवाजी की ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है ।)

शिवाजी : (भर्राए हुए स्वर में) मैणा को तत्काल इस पड़वी मेंलाओ।

(आबाजी सोनदेव जल्दी से दालान से बाहर जाता है। शिवाजी एकटक पालकी की ओर देखते हैं, मोरोपंत शिवाजी की तरफ। कुछ ही पल में शिवाजी जल्दी से पालकी के निकट पहुँचते हैं। मोरोपंत शिवाजी के पीछे जाता है।)

शिवाजी : खोल दो मैणा, आबाजी

(आबाजी सोनदेव पालकी के दरवाजे खोलता है। दरवाजे खुलते ही अहमद की पुत्र- वधू उसमें से निकल चुपचाप एक ओर सिकुडकर खड़ी हो जाती है। वह परम सुंदरी युवती है। वेष-भूषा मुगल स्त्रियों के सदृश है।)

शिवाजी :

साहित्य-सुधा (अहमद की पुत्र वधू से) माँ! शिवाजी अपने सिपहसालार की इस नामाकूल हरकत पर आपसे मुआफी चाहता है। आह ! कैसी अजीबो-गरीब खूबसूरती है आपकी। आपको देखकर मेरे दिल में एक.. सिर्फ एक बात उठ रही है - कहीं मेरी माँ में आपकी-सी खूबसूरती होती तो मैं भी एक खूबसूरत शक्स होता। माँ.. आपकी खूबसूरती को मैं एक.. सिर्फ एक काम में ला सकता हूँ। उसका हिन्दू विधि से पूजन करूँ, उसकी इसलामी तरीके से इबादत करूँ.. आप जरा भी परेशान न हों माँ। आपको आराम, इज्जत, हिफाजत और खबरदारी के साथ आपके शौहर के पास पहुँचा दिया जाएगा बिना देरी के फौरन ! (आबाजी सोनदेव की ओर घूमकर) आबाजी ! तुमने ऐसा काम किया है जो कदाचित् क्षमा नहीं किया जा सकता। शिवा को जानते हुए, निकट से जानते हुए, तुम्हारा साहस ऐसा घृणित कार्य करने के लिए कैसा हुआ ? शिवाजी ने आज पर्यन्त किसी मसजिद की दीवाल में बाल बराबर दरार भी न

आने दी। शिवाजी को यदि कहीं कुरान की पुस्तक मिली तो उसने सिर पर चढ़ाया, उसके एक पन्ने को भी किसी प्रकार की क्षति पहुँचाये बिना, मौलवी साहब की सेवा में भेज दिया। हिन्दू होते हुए भी शिवा के लिए इसलाम धर्म पूज्य है, इसलाम के पवित्र स्थान, उसके पवित्र ग्रन्थ, सम्मान की वस्तुएँ हैं। शिवा हिन्दू और मुसलमान प्रजा में कोई भेद नहीं -साहित्य-सुधा समझता। अरे ! उसकी सेना में मुस्लिम सैनिक तक हैं.. वह देश में हिन्दू राज्य नहीं, सच्चे स्वराज्य की स्थापना चाहता है। आतताइयों से सत्ता का अपहरण कर उदार चेताओं के हाथों में अधिकार देना चाहता है। फिर पर - स्त्री, अरे.. पर - स्त्री तो हरेक के लिए माता के समान है। जो अधिकार प्राप्त जन हैं, जो सरदार हैं, या राजा- उन्हें तो इस संबंध में विवेक, सबसे अधिक विवेक रखना आवश्यक है। (कुछ रूककर) आबाजी ! क्या तुम मेरी परीक्षा लेना चाहते थे? इसलिए तो तुमने यह कृति नहीं की? शिवाजी ये लड़ाई-झगडे, ये खजाने क्या व्यक्तिगत सुखों के लिए कर रहा है? क्या स्वयं चैन उड़ाना उसका उद्देश्य है तब - तब तो ये रक्तपात, ये लूटमार अत्यंत घृणित कार्य हैं। शिवा में यदि शील नहीं तो उसके सेनापतियों, सरदारों को शील का स्पर्श तक नहीं हो सकता। फिर तो हममें और इन्द्रिय- लोलुप लुटेरों तथा डाकुओं में कोई अंतर ही नहीं रह जाता। अरे, तब तो हमारे जीवन हमारी मृत्यु, हमारी विजय में हमारी पराजय, कहीं श्रेयस्कर है। मोरोपंत से आह पेशवा, यह.. यह मेरे.. मेरे एक सेनापति ने क्या.. क्या कर डाला? लज्जा से मेरा सिर आज पृथ्वी में नहीं, पाताल में घुसा जाता है। इस पाप का न जाने मुझे कैसा..कैसा प्रायश्चित्त करना पडेगा ? (कुछ रुककर) पेशवा इस समय तो मैं केवल

एक घोषणा करता भविष्य में अगर कोई ऐसा कार्य करेगा तो उसकासिर उसी समय धड़ से अलग कर दिया जाएगा !

(शिवाजी का सिर नीचे झुक जाता है। अहमद की पुत्रवधू कनखियों से शिवाजी की ओर देखती है । उसकी आँखों में आँसू छलछला आते हैं। मोरोपंत शिवाजी की तरफ देखता है, आबाज सोनदेव घबराहट-भरी दृष्टि से मोरोपंत की ओर देखता रह जाता है ।)

खण्ड – ४

19. अरण्य संस्कृति (प्रबोधात्मक निबंध)

-कन्हैयालाल माणेकलाल मुंशी

मुंशी जी का जन्म गुजरात के भरुच नगर में सन् 1887 ई. में हुआ था। आप हिन्दी एवं गुजराती के प्रसिद्ध लेखक ही नहीं बल्कि स्वाधीनता संग्राम के सेनानी भी थे। गांधीजी के संपादन में निकली 'यंग इण्डिया' पत्रिका के आप सह संपादक थे। भारतीय दर्शन व संस्कृति का गहन अध्ययन करनेवाले मुंशीजी ने भारतीय विद्याभवन नामक संस्थाओं का स्थापन किया जिनकी अनेक शाखाएँ देश - विदेशों में फैली हैं।

प्रस्तुत पाठ 'अरण्य संस्कृति' मुंशीजी का एक ललित निबंध है। इसमें लेखक ने हमारी प्राचीन संस्कृति को अरण्यों से जुडी सिद्ध किया और कहा कि पर्यावरण संरक्षण- तत्त्व भारतीय संस्कृति का एक अंश है तथा पर्यावरण के प्रति जागरूकता भारतीय सनातन धर्म का एक सहज गुण आधुनिक समाज के लिए यह निबंध अवश्य पठनीय है। है।

हमारी संस्कृति वन-प्रधान है। ऋग्वेद, जो हमारी सनातन शक्ति का मूल है, वन-देवियों की अर्चना करता है। मनुस्मृति में वृक्षविच्छेदक को बड़ा पापी माना गया है- 'जो आदमी वृक्षों को नष्ट करता है, उसे दण्ड दिया जाए।' तालाबों, सड़कों या सीमा के पास के वृक्षों को काटना गुरुतर अपराध था । उसके लिए दण्ड भी बड़ा कड़ा रहता था। उसमें कहा गया है कि जो वृक्षारोपण करता है, वह तीस हजार पितरों का उद्धार करता है । अग्निपुराण भी वृक्षपूजा पर जोर देता है। वृक्षों का रोपण स्नेहपूर्वक और उनका पालन पुत्रवत् करना चाहिए।

पुत्र और तरु में भी भेद है, क्योंकि पुत्र को हम स्वार्थ के कारण जन्म देते हैं, परंतु तरु-पुत्र को तो हम परमार्थ के लिए ही बनाते हैं। ऋषि-मुनियों की तरह हमें वृक्षों की पूजा करनी चाहिए क्योंकि वृक्ष तो द्वेषवर्जित हैं। जो छेदन करते हैं, उन्हें भी वृक्ष छाया, पुष्प और फल देते हैं। इसीलिए जो विद्वान पुरुष हैं, उनको वृक्षों का रोपण करना चाहिए और उन्हें जल से सींचना चाहिए ।

हम स्वर्ग की बात क्या करें ? हम वृक्षारोपण करके यहाँ ही स्वर्ग क्यों न बनाएँ? इतिहास में महान सम्राट अशोक ने कहा है"रास्ते पर मैंने वट-वक्ष रोप दिए हैं, जिनसे मानवों और पशुओं को छाया मिल सकती है। आम्रवृक्षों के समूह भी लगा दिए। " आज प्रभुत्व-संपन्न भारत ने इस महाराजर्षि के राज्य-चिह्न ले लिये हैं। 23 सौ वर्ष पूर्व उन्होंने देश में जैसी एकता स्थापित की थी, वैसी ही हमने भी प्राप्त कर ली है। क्या हम उनके इस संदेश को नहीं सुनेंगे। इस संदेश को सुनकर निश्चय ही ऐसा प्रबंध करेंगे, जिससे भारत के भावी प्रजाजन कह सकें कि हमने भी हर रास्ते पर वृक्ष लगाये थे, जो मानवों और पशुओं को छाया देते हैं।

एक समय ऐसा भी था, जब हमारी संस्कृति सर्वांग जीवन को समरस बनाती थी। आर्थिक जीवन पर भी उसका प्रभाव पड़ता था । लेकिन आज हमने इन प्रश्नों को एक दूसरे से बिल्कुल पृथक कर दिया है। सच तो यह है कि समस्त जीवन एक है, अभेद्य है। इस , सत्य को देखने की कलाहमारे हाथों से निकल गयी है । लेकिन मुझे तोयह स्पष्ट दिखाई देता है कि जब तक हममें राष्ट्रीय आत्मविश्वास न आयेगा, तब तक इस भयंकर परिस्थिति से पार उतरने की शक्ति न आएगी। एक बार फिर राष्ट्र की आत्मा को जगाना होगा ।

आज जो बहुत बड़ा प्रश्न हमारे सामने है, उसको लीजिए। भारत में कभी अन्न की कमी नहीं थी।

भूतकाल में भारत धन और धान्य से समृद्ध था। आज न्यूनता हमारे सामने ताण्डव कर रही है। जो माता अभी तक 'सुजलां सुफलां और शस्यश्यामलां' थी, वह क्षीण हो गयी है। अपनी संतानों को भी वह खिला नहीं सकती। क्योंकि जो हमारी सांस्कृतिक प्रणाली है, उनको नवीन दृष्टि से देखने की शक्ति हम में नहीं रही। किन्तु यह बात निश्चय समझिए कि इस शक्ति के बिना हम अर्वाचीन जीवन में टिक नहीं सकते।

'वृक्ष ही जल है, जल रोटी है और रोटी ही जीवन है' ये वाक्य नग्न सत्य हैं। आज सभी भारतीय हृदयों में असंतोष भरा है क्योंकि पानी संग्रह करने की पुरानी पद्धति हम हस्तगत नहीं कर सके। हमारे पास पानी नहीं है, वर्षा अनिश्चित है, लेकिन हमारी दृष्टि संकुचित हो गयी। हम नये - से बन गये। उस महिमा की हमको परवाह नहीं रही। वृक्षों को हम काटने लगे। वृक्षारोपण आज एक फैशन बन गया है, परंतु उसमें जो धार्मिक श्रद्धा का तत्त्व था, वह चला गया। वृक्षारोपण करना केवल प्रथा- पालन नहीं होना चाहिए। वृक्षों के साथ हमारी संवेदना जुड़नी चाहिए। वृक्ष हमारे आत्मीय बनने चाहिए। वृक्षों के प्रति हमारे मन में पूज्य भाव जागना चाहिए। हमें अंतर्मन से वृक्षों का ऋण तथा उपकार स्वीकार करना चाहिए। कुछ लोगों ने वृक्षों की रक्षा हेतु अपने प्राण भी दिये हैं। राजस्थान के बिश्नोई लोगों ने यह कर दिखाया है। ढ़ाई सौ वर्ष पूर्व जोधपुर रियासत में पेड़ों को कटने से बचाने के लिए खेजड़ी गाँव में 272 ग्रामीणों अपना बलिदान दिया था। विश्व में ऐसा उदाहरण नहीं मिलता।

हमारी संस्कृति में जो सुंदरतम और सर्वश्रेष्ठ है, उसका उद्भव सरस्वती के तट के वनों में हुआ। नैमिषारण्य के वन में शौनक मुनि ने हमको महाभारत की कथा सुनायी - महाभारत

जो भारतीय आत्मशक्ति का स्रोत है | हमारे अनेक तपोवनों में ही ऋषिमुनि वास करते थे, आजीवन अपने संस्कार, आत्म-संयम और भावनाओं को सुदृढ़ बनाते थे । हमारे जीवन का उत्साह वृन्दावन के साथ लिपटा हुआ है। वृन्दावन को हम कैसे भुला सकते हैं? वहीं कृष्ण भगवान ने यमुना तटपर नर्तन करते हुए डालियों और पुष्पों के ताल के साथ अपनी वेणु बजायी । उनकी ध्वनि आज भी हमारे कानों में सुनायी देती है।

हमें पूर्वजों की ज्वलन्त संस्कृति मिली है, लेकिन हम उसके योग्य नहीं रहे। हम अपने वनों को काट डालते हैं। हम वृक्षों का आरोपण करना भूल गये । वृक्ष-पूजा का हमारे जीवन में स्थान नहीं रहा। हमारी स्त्रियों में से शकुन्तला की आत्मा चली गयी है शकुन्तला वृक्षों को पानी दिये बिना आप पानी ग्रहण नहीं करती थी । आभूषणप्रिय होते हुए भी वह यह सोचकर पल्लवों को नहीं तोड़ती थी कि इससे वृक्षों को दुख होगा। पार्वती ने देवदारु को पुत्र के समान समझकर माँ के दूध के समान पानी पिलाकर बढ़ाया । हमारे परिवारों । में आज भी बहुत-सी महिलाएँ तुलसी, पीपल, वटवृक्ष आदि को पानी अर्पित करने तक स्वयं पानी नहीं पीती । हमारी सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों ने अधिक की है। माता ही अपने बच्चों को संस्कारों का पहला पाठ पढ़ाती है । इसी कारण माता प्रथम गुरु हैं। इस परंपरा की रक्षा होनी चाहिए।

वृक्षों की नीली छटा के लिए हमारे पूर्वजों में जो प्रेम था, वह हममें भी होना चाहिए। हमें अपनी वन-प्रधान संस्कृति की ओरअभिमुख होना चाहिए। वनों की छाया में जन्म लिया, वृक्षों के पत्तों पर प्रभातकालीन जलकण का जलपान किया । समीर में डोलती पत्रावलियों में से आती हुई चन्द्रकिरण के साथ नृत्यकला के प्रथम पाठ पढ़े। इस संस्कृति के मौलिक सिद्धांतों को अर्वाचीन जीवन में हम ला सकते हैं। हर एक युग में अपनी संस्कृति की प्रेरणा से हमने संस्कारों की मूलभूत भावनाओं को सुदृढ़ बनाया है।

इतना ही नहीं, विभिन्न युगों में जो विषमताएँ उपस्थित हुईं, भारतवासियों ने उन्हें मेटने के लिए इन मूल्यों को शक्ति और व्यापकता प्रदान की । ये मूल्य ही हमारी आंतरिक शक्ति है। प्राचीन भारत में तालाब खुदवाना, बावड़ी या कुआँ बनवाना, यात्रियों के विश्राम के लिए धर्मशाला बनवाना तथा वृक्षारोपण करना आदि पुण्यकार्य समझे जाते थे। महाकवि तुलसीदास के अनुसार परहित या परोपकार जैसा कोई धर्म नहीं है- 'परहित सरिस धरम नहिं भाई' |

इस दृष्टि से वृक्षारोपण तथा वृक्षों का संरक्षण सबसे बड़े परोपकार का कार्य है। वृक्षपूजा हमारी संस्कृति का अंग है । वट सावित्री आदि व्रतों-त्योहारों के समय हमारे देश की महिलाएँ पेड़ों को पानी पिलाती हैं। पूजा करती हैं। कुंकुम, रोली, अक्षत - नैवेद्य चढ़ाती हैं । वट, पीपल, गूलर, शमी, नीम, तुलसी आदि पेड़ों में भगवान का वास माना जाता है। ये वृक्ष आध्यात्मिक शक्ति के स्रोत हैं।

हमारा देश जल-वायु की दृष्टि से अत्यंत विविधतापूर्ण है। हमारे देश में छः ऋतुएँ होती हैं । ऋतुओं के अनुरूप पेड़ फूलते और फलते हैं। विविध प्रकार की फसलें उत्पन्न होती हैं। जलवायु का व ऋतुओं का ऐसा वैविध्य विश्व के किसी देश में दिखलाई नहीं देता। विश्व में सर्वाधिक वर्षावाला प्रदेश चेरापूँजी (असम) हमारे देश में ही है। कहीं हिमालय की बर्फ - ढँकी चोटियाँ और सघन वन हैं तो कहीं

दण्डकारण्य। कहीं वृन्दावन है तो कहीं सुंदरवन । कहीं पूर्वी और पश्चिमी घाट के सुरम्य प्रदेश हैं तो कहीं दक्षिण के पठार और पश्चिम के मरुस्थल । देश की इस जैवसंपदा के वैविध्य की रक्षा करना हम सभी का कर्तव्य है । इसी कारण हर नागरिक को प्रतिवर्ष कम से कम तीन पेड़ अवश्य लगाने चाहिए। वर्षारंभ में वृक्षारोपण करना राष्ट्रीय कार्यक्रम होना चाहिए ।

पर्यावरण-संरक्षण की दृष्टि से वनों का बहुत महत्त्व है। प्राकृतिक-संतुलन बनाये रखने के लिए किसी भी देश की 335 भूमि वनाच्छादित होनी चाहिए । पर दुर्भाग्यवश हमारे देश में केवल 115 वन रह गये हैं। प्राचीन भारत में 505 से अधि भूमि वनाच्छादित थी । हमारी संस्कृति मूलतः 'वन्य संस्कृति' या 'अरण्य संस्कृति' रही है। हमारे ऋषि-मुनियों व तपस्वियों ने वनों में रहकर ही सत्य का संधान किया। वनों के कारण ही वातावरण व पर्यावरण-संतुलन बना रहता है। बादल ठण्डे होकर बरसते हैं। वनों के अंचलों से ही झरनों व नदी-नालों का उद्गम होता है। वन हमें लकड़ी, ईंधन, चारा, फूलफल, औषधि और न जाने क्या क्या बहुमूल्य वस्तुएँ प्रदान करते हैं वन प्रदेश प्राणवायु के आगार हैं। वनों में हमें जीवन-वैविध्य (एत्द्-युद्धद्मद्य) के दर्शन होते हैं। अनेक जीव-जन्तु, पशु-पक्षी वनों में आश्रय पाते हैं। जीव-जन्तुओं तथा पेड़-पौधों का संबंध आद्य है, अटूट है। जन-संख्या विस्फोट, शहरीकरण, औद्योगीकरण तथा उपभोक्ता संस्कृति के प्रसार के कारण जंगलों का बड़ी द्रुतगति से विनाश हो रहा है। इसके दुष्परिणाम सर्वत्र दिखलाई पड़ रहे हैं । वातावरण में प्रतिवर्ष गर्मी बढ़ रही है, बाढ़े और सूखा तबाही मचा रहे हैं। रेगिस्तान फैलते जा रहे हैं। ऐसे में हम सभी का कर्तव्य है कि हम वनों का संरक्षण तो करें ही, साथ ही बृहत् वृक्षारोपण करें तथाघायल धरती माता को पुनः 'हरित वसुंधरा' बनाएँ ।

जंगल है तो जल है, जल है तो जीवन है । भीषण गर्मी में हम छायादार वृक्षों का उपकार नहीं भूल सकते। मंजरित वृक्षों का सौंदर्य हम नहीं भूल सकते। हम नहीं भूल सकते, भव्य वृक्षों का अद्भुत गौरव । वृद्ध ऋषियों के समान जगत कल्याण में ही जीवन-साफल्य समझनेवाले वनों

का । यदि प्रत्येक पुरुष और स्त्री वृक्षों के महत्त्व को समझे और पुत्रवत् उनका परिपालन करे तो भारत का हर नगर, हर गाँव जीवनोल्लास से ओत-प्रोत हो जायेगा । 'वक्षो रक्षति रक्षितः ' अर्थात् जो वृक्षों की रक्षा करता है, वृक्ष उसकी रक्षा करते हैं । ।

खण्ड - ५

20. प्रयोजनमूलक हिन्दी

'प्रयोजनमूलक हिन्दी' यह शब्द हिन्दी के विख्यात पण्डित मोटूरि सत्यनारायण जी के द्वारा हिन्दी जगत् को दिया गया। किसी भी भाषा का प्रयोजन 'भावों तथा विचारों का अभिव्यक्तीकरण' या संप्रेषण होता है। फिर 'प्रयोजनमूलक हिन्दी' शब्द से आशय क्या हैइस प्रश्न के समाधान के लिए भाषा के विभिन्न आयामों पर दृष्टि डालनी होगी। प्रयोजनमूलक हिन्दी का अर्थ भाषा के साहित्य से नहीं, भाषा के विविध प्रयोगों और प्रयोजनों से संबंधित है।

प्रयोजनमूलक भाषा का आयाम अधिक प्रकार्यात्मक (Functional) होता है। अर्थात् इसका प्रयोग किसी कार्य-विशेष के निष्पादन के लिए ही होता है । हिन्दी के संदर्भ में यह 'प्रयोजनमूलक' शब्द और भी अधिक विस्तृत रूप ले लेता है क्योंकि भारत में अधिकांश जनता के द्वारा प्रयुक्त प्रयोजनमूलक भाषा का रूप हिन्दी ही है । इस प्रकार देखेंगे तो प्रयोजन मूलक हिन्दी के कई रूप बनते हैं ।

'प्रयोजनमूलक हिन्दी' शब्द का प्रयोग अंग्रेजी शब्द (Functional Hindi) के पर्याय के रूप में अधिक हो रहा है। कुछ विद्वान इसे व्यावहारिक हिन्दी या कामकाजी हिन्दी की भी संज्ञा देते हैं । अन्य कुछ विद्वानों का आशय है कि 'व्यावसायिक हिन्दी' ही इसके लिए अधिक समीचीन है। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि 'प्रयोजनमूलक हिन्दी', हिन्दी का वह रूप है जो प्रशासन, व्यापार-वाणिज्य, वैज्ञानिक, तकनीकी, विधि, अनुसंधान इत्यादि क्षेत्रों में प्रयुक्त होता है। अतः भावप्रधान या साहित्यिक भाषा की तुलना में प्रयोजनमूलक हिन्दी का क्षेत्र

व्यापक है। इसमें भाषा की व्याकरणिक संरचना पर ध्यान न देकर उसकी व्यावहारिक उपयोगिता पर ही बल दिया जाता है।

प्रयोजनमूलक हिन्दी : प्रकार :-

1. बोलचालीय हिन्दी (Spoken Hindi)

2. व्यापारी हिन्दी (Business Hindi)

3. कार्यालयी हिन्दी (Official Hindi)

4. शास्त्रीय हिन्दी Business Hindi)

5. तकनीकी हिन्दी Technical Hindi

6. मीडिया की हिन्दी Media Hindi

7. पत्रिकाओं की हिन्दी (Hindi of Print Media)

8. फिल्म की हिन्दी (Filmy Hindi)

राजभाषा, राष्ट्र भाषा और संपर्कभाषा राजभाषा

(Official language) मुख्यतः राज्य की शासनात्मक क्रिया-कलापों के लिए प्रयुक्त होनेवाली भाषा है। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी के शब्दों में "राजभाषा उसे कहते हैं जो केंद्रीय और प्रादेशिक सरकारों द्वारा पत्र व्यवहार, राज्यकारी (राजकारी) और अन्य सरकारी लिखा-पढ़ी के काम में लायी जाए ।" दायित्व और भी बढ़ गया है। अनेक क्षेत्रों में आनेवाले नये-नये शब्दों को हिन्दी में लाने के लिए केंद्र सरकार ने राजभाषा आयोग का निर्माण किया। राजभाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार करने का निर्णय 14 सितंबर 1949 को लिया गया था । अतः

उसी दिन को हर वर्ष पूरे देश में राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु 'हिन्दी दिवस' मनाया जाता है।

राष्ट्रभाषा किसी राष्ट्र - विशेष की प्रतिनिधि भाषा होती है। राष्ट्र मृग, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्र गीत की भांति राष्ट्र भाषा का होना भी राष्ट्र की पहचान के लिए आवश्यक है। भारत में अनेक भाषाएँ प्रचलित हैं और इस देश की हर प्रमुख भाषा को देश की प्रतिनिधि भाषा कहा जा सकता है। अतः भारत में प्रचलित 22 प्रमुख भाषाओं को भारत की राष्ट्रभाषाओं के रूप में स्वीकार किया गया।

संपर्क भाषा का आशय है विभिन्न भाषा-भाषियों के मध्य संपर्क स्थापित करनेवाली भाषा। आज भारत में हिन्दी और अंग्रेजी संपर्कभाषा के रूप में उपयुक्त हैं।

व्याकरण तथा पत्राचार

वर्तनी

शुद्ध वर्तनी के लिए नियम :-

1. भाषा में उच्चारण की स्पष्टता लानी होगी। जब उच्चारण ठीक हो, तो वर्तनी भी ठीक होगा। क्योंकि देवनागरी लिपि ऐसी वैज्ञानिक लिपि है कि उसमें वही लिखा जायेगा जिसका उच्चारण होगा ।

2. निरंतर पढ़ते-लिखने के अभ्यास से वर्तनी दोषों पर रोक लगायी जा सकती है।

3. स्वर-व्यंजन, हलंत - लिंग, वचन, प्रत्यय, संधि समास आदि के प्रयोग में निरंतर अभ्यास की जरूरत है।

हिन्दी में वर्तनी दोषों के असंख्य उदाहरण बन सकते हैं जिनका उल्लेख करना यहाँ संभव नहीं है । अतः उदाहरण के लिए जिन शब्दों के साथ अधिक वर्तनी - दोष पाये गये हैं- उनको यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

अशुद्धरूप	**शुद्धरूप**
1. अहार	आहार
2. आदमि	आदमी
3. आशमान	आसमान
4. अन्यधा	अन्यथा
5. अत्याधिक	अत्यधिक
6. आँक	आँख
7. ईक	ईख
8. इमलि	इमली
9. उन्नति	उन्नति